आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ।।
कलि ताती ठांढा हरि नाउ ।।
भाग — 8

इस जन्म में मलिन बुद्धि की तुच्छ **रुचियों** द्वारा हम दिन-रात —

बुरे ख्याल
बुरे कर्म
ईर्ष्या
द्वेष
बदले की भावना
नफ़रत
तअस्सुब
अत्याचार
निंदा
शक
स्वार्थ
डर-भय

आदि, के **तुच्छ मनोभावों द्वारा** अपनी सुरति, मति, मन, बुद्धि को और मलिन कर रहे हैं, जिसके फलस्वरुप हमारी **'मानसिक अग्नि' और बढ़ती जाती है ।**

याद रखने वाला जरूरी नुक्ता यह है कि हमारे मन, बुद्धि, **अन्तःकरण की 'मैल' ही हमारी मानसिक अग्नि का 'ईंधन' है ।** यह **ईंधन'** हमारे अन्दर जितना उग्र होगा, उतनी ही भीषण अग्नि प्रज्जवलित होगी ।

दूसरे शब्दों में हमारी अन्दरूनी मानसिक मैल के अनुपात तथा शक्ति अनुसार ही हमें शारीरिक और मानसिक भयानक बीमारियाँ अथवा परिणाम भोगने पड़ते हैं, उदाहरणस्वरूप —

घास-फूस को लगी आग थोड़े समय में बुझ जाती है ।
लकड़ी की आग कुछ समय तक रहती है ।
पैट्रोल तथा गैस की लपटें अत्यन्त तबाही करती हैं ।
बम्ब की बरबादी के परिणाम तो कई वर्षों तक रहते हैं ।
परमाणु बम्ब की बरबादी से तो प्रलय ही आ जाती है ।

ज्यों-ज्यों हम अपने **तुच्छ रुचियों वाले ख्यालों को —**

दोहराते हैं
घोटते हैं
अभ्यास करते हैं
'सुमिरन' करते हैं

त्यों-त्यों हमारी असुरी मायिकी **मानसिक शक्ति बढ़ती जाती है** तथा **दामनिक** होती जाती है, उसी अनुपात में, हमारे मन-तन पर भयानक प्रभाव पड़ता है, जिस से हम स्वयं भी अत्यन्त दुखी होते हैं तथा दूसरों को भी दुखी करते हैं । इस प्रकार तुच्छ ख्यालों तथा तुच्छ रुचियों के **अभ्यास** द्वारा, हम अपना मन —

मलिन करते जाते हैं
तुच्छ कर्म करते हैं
पाप अर्जित करते हैं
अपना वातावरण मलिन करते हैं
अपने बुरे 'भाग्य' बनाते हैं
आवागमन के चक्र में पड़ जाते हैं
यम के वश आ जाते हैं

स्वयं जलते हैं,
दूसरों को जलाते हैं

तथा **'आतिश दुनिया'** में और **बढ़ोत्तरी करते हैं ।**

यह **हमारी आन्तरिक 'मैल'** हमारी अपनी लगायी हुई अग्नि ही है, जो हमारी सुरति को मायिकी मंडल की ओर बाहरमुख करके, **विखण्डित कर देती है।** इस प्रकार अन्दरूनी 'अग्नि-शोक-सागर' में, हमारे **'मन की मैल' अन्दरूनी आग की ही 'लपटें' हैं** जो हमारे मन को **और मैला करती जाती हैं तथा जला देती हैं ।** हमारा मन अपने ही तुच्छ तथा मैले ख्यालों की 'छुह' द्वारा मलिन हो जाता है तथा **हमारी सुरति 'मायिकी अग्नि' से —**

तप जाती है
विखण्डित हो जाती है
मैली हो जाती है
भारी हो जाती है

तथा हम पाँच वासनाओं के अधीन कर्म करते और परिणाम भोगते हैं ।

पत्थर पर गिर कर आग की चिंगारी अपने आप बुझ जाती है, क्योंकि वहाँ चिंगारी के भभक उठने के लिए ईंधन नहीं होता ।

इसी प्रकार यदि हमारे मन मे कोई 'मैल का ईंधन' न हो, तो हम पर मायिकी चिंगारियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता तथा चिंगारियां अपने आप ही बुझ जाती हैं ।

वास्तव में **'मैल'** का मूल या बुनियादी कारण जीव का **'अहम्'** ही है। 'अहम्' की कल्पना द्वारा हमारी अलग हस्ती — 'मैं-मेरी' बनती है ।

माया के भ्रम-भुलाव में से ही —

काम
क्रोध

लोभ
मोह
अहंकार

उत्पन्न होते हैं ।

पंच पूत जणे इक माइ ।। (पृ. 865)

इनके प्रभावाधीन अनेक तुच्छ तथा मैले —

रव्याल
तरंग
मनोभाव
भावनाएँ
ईर्ष्या
द्वेष
डर
शक
जलन
कुढ़न
वैर
विरोध
घृणा
रोष
शिकायतें

आदि अनेक **वासनाएं उत्पन्न होती तथा प्रवृत्त होती हैं ।**

यह समस्त वासनाएँ या तुच्छ रव्याल अहम्-ग्रस्त मन की **सूक्ष्म 'मैल'** ही है ।

लकड़ी में सूक्ष्म 'अग्नि' गुप्त रूप में **प्रविष्ट** है, परन्तु जब इसे चिंगारी लग जाये, तो अग्नि प्रकट होकर भीषण ज्वाला के रूप में भभक उठती है तथा **बरबादी** करती है ।

इस सूक्ष्म अग्नि का गुप्त अंश समस्त योनियों में अलग-अलग मात्रा में प्रविष्ट है, क्योंकि यह अग्नि का 'तत्' समस्त योनियों के अस्तित्व का एक अंग है। परन्तु मनुष्य में इस सूक्ष्म, गुप्त 'अग्नि-तत्' की कोई सीमा नहीं, क्योंकि मनुष्य ने अपनी बुद्धि की शक्ति द्वारा, इन वासनाओं की खोज तथा अभ्यास करके अत्यन्त दर्जे तक अपने अन्दर इनका विकास कर लिया है। केवल अन्दर ही नहीं, अपितु विज्ञान द्वारा बाहर के प्राकृतिक तत्वों की गहन खोज करके, इन में छुपी हुई गुप्त शक्तियों को असीमित दर्जे तक प्रकट तथा प्रवृत कर लिया है।

इसके परिणाम स्वरूप 'एटम-बम्ब' तथा परमाणु मिज़ाइल (Nuclear missiles) बन चुके हैं जिन के परिणामों से समस्त दुनिया में दहशत छायी हुई है तथा भय-भीत होकर त्राहि-त्राहि कर रही है।

वास्तव में इस भयानक अग्नि की 'प्राप्तियां' तथा 'करिश्में' हमारी अन्दरूनी मानसिक अग्नि का **प्रत्यक्ष बाहरी प्रकटाव तथा प्रतीक हैं।**

इस प्रकार इन्सान ने सारी सृष्टि को **एक अथाह 'अग्नि-शोक-सागर' तथा 'आतिश-दुनिया' बना रखा है।**

इस का 'दोषी' हमारा 'अहम्' ही है जिसने बुद्धि की शक्ति का अनुचित तथा गलत प्रयोग करके, सारी दुनिया को 'अग्नि-कुण्ड' अथवा नरक बना दिया है।

यह आन्तरिक मानसिक अग्नि, गुप्त रूप में, सभी प्राणियों के हृदय में सुलगती रहती हैं, परन्तु हमें इस का अहसास नहीं होता। इसी कारण कोई भी इन्सान यह मानने को तैयार नहीं कि उसके अन्दर 'अग्नि' सुलग रही है!

हम अपनी ऐसी गुप्त सूक्ष्म भीतरी मानसिक अग्नि को, सहज-स्वभाव या जान-बूझ कर —

हार-श्रृगांर द्वारा
स्वादों के रसों द्वारा
व्यर्थ रुझान द्वारा
अनेक प्रकार के मनोरंजन द्वारा
फिलोस्फियों द्वारा
कई प्रकार के नशों की खुमारी द्वारा

भुलाने, टालने या छुपाने के प्रयत्न में लगे रहते हैं, फिर भी जब कभी इस गुप्त सुलगती चिंगारी को कोई उक्साहट मिलती है, तब यह भभक उठती है तथा भीषण ज्वाला बन कर तबाही मचाती है।

इसी प्रकार इन्सान, दिन-रात, सारी उम्र, इस सूक्ष्म गुप्त 'अग्नि-शोक-सागर' में पलचते, जलते, सड़ते-सुलगते रहते हैं।

कितनी अनोखी बात है कि हम इतने —

सयाने
ज्ञानी
पडित
विद्वान
विज्ञानी
फिलोस्फर
भले-भद्र
दिगंबर
अफलातून
शिरोमणि

गुरू

भगवान

आचार्य

कहलाते हुए भी, अपनी आन्तरिक सूक्ष्म गुप्त अग्नि को—

महसूस करने

जानने

समझने

बूझने

चीन्हने

सीझने

पहचानने

में असमर्थ हैं !!

जब हमें अपने रोग का ज्ञान नहीं, तब इलाज किस प्रकार हो सकता है ?

हम जब कभी मानसिक अग्नि के 'ताप' से अत्यन्त दुखी होते हैं, तो नशे तथा तुच्छ मनोरंजन में खचित होकर अस्थायी रूप में इस जलन को भुलाने या टालने का प्रयत्न करते हैं ।

गुरू साहिब ने गुरबाणी में इस खतरनाक रोग, 'मानसिक-अग्नि' का वर्णन विस्तारपूर्वक किया है तथा इसके परिणामों के विषय में ताड़ना की है । परन्तु हम मायिकी रुझान में इतने गलतान हैं कि गुरबाणी की ताड़ना तथा बचाव के साधनों की ओर हमें —

ध्यान देने की फुरसत ही नहीं

समझने की कोशिश ही नहीं

अनुभव करने की आवश्यकता ही नहीं

श्रद्धा-भावना भी नहीं

मानने को तैयार ही नहीं

अनुसरण तो क्या करना था ?

क्योंकि यह 'गुप्त अग्नि' हमारे जीवन का 'अंग' बन चुकी है तथा जन्म-जन्मों से हम इसके आदी होकर 'कठोर' हो चुके हैं।

चाहे हम अपनी अन्दरूनी मानसिक अग्नि को अनुभव करें या न, परन्तु इसका प्रभाव, रंगत तथा सेंक हमारे दैनिक जीवन के प्रत्येक पक्ष, जैसे—

चेहरे की उदासी में
रूखेपन में
गृहस्थ की चिन्ताओं में
चिंता की रेखाओं में
डर-भय के चिन्हों में
माथे की शिकन में
चमक-रहित आँखों में
घृणित स्वभाव में
शरीर की बेचैनी में
पतन में
स्वभाव के चिड़चिड़े पन में
फीके-रूखे वचनों में
तुच्छ ख्यालों में
तुच्छ सोच में
मलिन चिंतन में
तुच्छ विचारों में
मलिन भावनाओं में
तुच्छ भावनाओं में
गलत निश्चयों में
गलत भ्रम में
कूड़ वहमों में
तुच्छ रुचियों में

बुरे कर्मों में
थोथे कर्म-काण्डों में
मुर्दा साधनों में
गंदे व्यवहार में
तुच्छ आचरण में
धर्म से अरुचि में
श्रद्धा-हीनता में
मनमुखता में
कठोरता में

स्वतः अवश्य ही प्रकट तथा प्रवृत होते रहते हैं ।

'अहम्' में से मायिकी भ्रम-भुलाव उत्पन्न होता है ।
भ्रम-भुलाव में से तुच्छ 'विचार' उत्पन्न होते हैं ।
तुच्छ विचारों में से मलिन रुचियाँ उत्पन्न होती हैं ।
मलिन रुचियों द्वारा बुरे कर्म होते हैं।
मलिन रव्यालों और बुरे कर्मों से मन मैला होता है ।
मानसिक मलिनता ही मानसिक गुप्त अग्नि का ईंधन है।
मानसिक अग्नि की 'सड़न' में से दुख-क्लेश पैदा होते हैं।
मानसिक अग्नि माया से उत्पन्न होती है।
वास्तव में, माया तथा सूक्ष्म अग्नि का स्वरूप एक ही है।

माइआ अग्नि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ ।। (पृ. 921)

इस प्रकार समस्त दुनिया इसी 'अग्नि-शोक-सागर' अथवा 'आतिश दुनिया' में पलच-पलच कर जल-भुन-सड़ रही है।

यह बात भलि-भांति समझने तथा दृढ़ करने योग्य है, कि जब तक हमारे हृदय में—

भ्रम
द्वैत भाव

ईर्ष्या

द्वेष

जलन

घृणा

पक्षपात

शक

डर-भय

चिंता

काम

क्रोध

लोभ

मोह

अहंकार

तृष्णा

आशा

मनसा

बदले

की भावना 'लेश' मात्र भी है, तब तक हमारे मन में —

मैल है

भ्रम है

अन्धकार है

अहम् है

अवगुण हैं

तुच्छ रुचियाँ हैं

गिरावट की भावना है

पाप है

दुख-क्लेश है
अग्नि है
आवागमन है
यम की सजा है
नरक है।

इसके ठीक विपरीत यदि मन, **मैल-रहित** या **निर्मल हो**, तब जीवन के हर पक्ष में से —

प्रीत
प्रेम
चाव
रस
रंग
खुशी
सुख
शान्ति
नूर
सहज
रौनक
ताज़गी
विकास की भावना
दया
क्षमा

के चिन्ह, स्वतः, सहज-स्वभाव ही प्रकाशमान होंगे तथा यह **दैवीय गुण परिपूर्ण होकर छलकेंगे**। इसलिए जीवन की इन दोनों दशाओं को अच्छी तरह —

समझने
जानने

पहचानने

चयन करने

विचार करने

निर्णय करने

अनुभव करने

की अत्यन्त आवश्यकता है, ताकि हम अपने लिए इन दोनों दिशाओं में से चयन करके, **अपने जीवन को सही दिशा दे सकें।**

इस दीर्घ तथा आवश्यक चयन के बिना हम अपने मन के पुराने बहाव या **'प्रवाह'** में ही बहते जायेंगे तथा गुप्त मानसिक अग्नि में—

जलते

भुनते

तपते

दुखी होकर

नरक भोगते रहेंगे तथा यम के वश पड़ेंगे।

यह महत्त्वपूर्ण निर्णय तथा चयन करके सही आत्मिक 'जीवन दिशा' की ओर मन को मोड़ने के लिए, **'साध-संगति'** अथवा बख्शे हुए, गुरुमुख प्यारों, महापुरुषों की संगति आवश्यक तथा अनिवार्य है।

ऐसी जीवंत, उच्च-पवित्र साध संगत में विचरण करते हुए, हमारे मन का 'रुख' धीरे-धीरे बदलता जायेगा तथा जीवन के प्रत्येक पक्ष में **परिवर्तन नजर आयेगा** —

मन एकाग्र होगा

मन शान्त होगा

दैवीय गुण उत्पन्न होंगे

अवगुणों की रुचि कम होती जायेगी

मानसिक मैल कम होती जायेगी

मानसिक अग्नि कम हो जायेगी
श्रद्धा भावना उत्पन्न होगी
गुरबाणी मीठी लगेगी
गुरबाणी के आन्तरिक भाव का ज्ञान होगा
गुरबाणी का रंग-रस आयेगा
सिमरन करने का चाव उठेगा
सिमरन दृढ़ होगा
'सास गिरास हरि धिआई' होगा
शबद-सुरति-लिवलीन होगी
सतिगुरू की अनेक बख्शिशें होंगी
सत्संग के प्रति प्यार उत्पन्न होगा
सेवा करने का चाव उत्पन्न होगा
स्वयं को न्यौछावर करने का मन करेगा
अनुभव खुलेगा
जीवन सफल होगा।

इस जीवन में स्वयं लगायी हुई मानसिक अग्नि को कम करने या **बुझाने का साधन, साध संगति द्वारा, जीवन दिशा का रुख बदलने से ही हो सकता है।** परन्तु अन्तःकरण की गहराईयों में जन्म-जन्म से एकत्रित 'मैल' की सुलगती अग्नि —'एलरजी'(allergy) को **बुझाना हमारे वश से बाहर है।**

इस विषय को समझने के लिए एक उपयुक्त उदाहरण दिया जाता है।

धरती की गहराईयों में, अग्नि के कई प्रकार के 'तत्व' एकत्रित होते रहते हैं। यह अग्नि जब तीव्र हो जाती है, तो **उबलने** लगती है। उबलती हुई धरती में जब कम्पन होता है, उसे भुचाल कहा जाता है।

जब यह अग्नि का 'उबाल' धरती में नहीं समा पाता, तो धरती को चीर कर, बहुत तीव्र गति से फुहारे की भांति उछलता है। इसे 'ज्वालामुखी का फटना' कहा जाता है, जिससे अत्यन्त तबाही होती है।

ठीक इसी प्रकार हमारे अन्तःकरण की गहराईयों में, हमारी जन्म-जन्मों की 'मैल' अथवा गुप्त अग्नि एकत्रित होती रहती है।

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु।।
(पृ. 651)

किसी उकसाहट के कारण यह अन्तःकरण की सुलगती अग्नि भभक उठती है तथा लावे के रूप में भयानक ज्वाला हमारे मन-तन व आस-पास के वातावरण पर भयानक प्रभाव डालती है। दूसरे शब्दों में यह अन्तःकरण की अन्दरूनी तीव्र ज्वाला, हमारे बाहरी मन के वश से बाहर है।

एक बार हम कैनेडा में 'कार' द्वारा यात्रा कर रहे थे। रास्ते में एक पहाड़ के गिरने से अनगिनत बड़ी-बड़ी चट्टाने बिखरी हुई थी। एक बहुत बड़ी चट्टान टूट कर इस प्रकार दो हिस्सों में बंटी हुई थी, मानो इसे आरी से काटा गया हो।

एक टुकड़े के पास जा कर देखा, तो उसकी साफ स्लेट की भाँति सतह पर रंग-बिरंगी तहें अथवा रेखाएं साफ नजर आईं। पूछने पर पता लगा कि वातावरण के प्रभावाधीन अरबों वर्षों में एक-एक तह बनी हुई है। बाहरी वातावरण तथा आन्तरिक तत्वों के अनुसार इन तहों की रंगत बेंअत समय में बदलती रही।

ठीक इसी प्रकार हमारे अन्दर जन्म-जन्मों से 'मैल' की तहें बनती आयीं हैं तथा प्रत्येक जन्म में, उस समय की जीवन-रेखा अनुसार इन

तहों की रंगत बदलती गयी, जो हमारे हृदय द्वारा कभी-कभी अनजाने तथा बिना किसी कारण **'अपनी रंगत का जलवा' दिखा जाती हैं।**

यही कारण है कि पाठ-पूजा तथा कर्म-धर्म करते हुए भी, अन्तःकरण की तहों में से अति-गहरी मैल-रूपी अग्नि या एलरजी की भड़ास तथा धुँआ, किसी-न-किसी रूप में अचानक बाहर की ओर उभर आता है तथा हमारी अन्दरूनी गहन रंगत को प्रकट कर जाता है।

इसी प्रकार कई नेक व्यक्तियों तथा भक्तों को भी, पूर्व कर्मों अनुसार दुख-क्लेश भोगने पड़ते हैं।

इस जन्म की अग्नि से बचने का तो कोई प्रयत्न हो सकता है, परन्तु पूर्व जन्मों की, अन्तःकरण में, गुप्त सुलगती अग्नि को कम करने या बुझाने में हमारा मन तथा बुद्धि असमर्थ हैं।

'कैंसर' या 'तपेदिक' की बीमारियाँ अति गहरी तथा अति गंभीर हैं। इनका इलाज साधारण दवाईयों से नहीं हो सकता। इनके इलाज़ के लिए विशेष अत्यंत प्रबल दवाईयों तथा बड़े आप्रेशन की आवश्यकता होती है। कई बार आप्रेशन या इलाज के बहुत समय बाद भी ये बीमारियाँ पुनः जाग कर फूट पड़ती हैं।

ठीक इसी प्रकार हमारे अन्तःकरण की गहराईयों में 'मैल' तथा 'अग्नि' रूपी 'कैंसर' या 'तपैदिक' की बीमारियाँ बढ़ती जाती हैं। ऐसी गम्भीर मानसिक बीमारियों या एलरजी के लिए दामनिक आत्मिक औषधि तथा मानसिक आप्रेशन की आवश्यकता है।

परन्तु आश्चर्य की बात है, कि ऐसे गम्भीर मानसिक रोग, हमारे अन्तःकरण को जन्मों-जन्मों से लगे हुए हैं, परन्तु हमें विनाशकारी तथा **घातक रोग का**—

अहसास नहीं

पता नहीं

तथा बेपरवाह, मस्त व लापरवाह होकर ढीठ बने हुए हैं।

यद्यपि इस खतरनाक, घातक मानसिक रोग के कारण, पलच-पलच कर दिन रात जल-भुन कर दुखी हो रहे हैं, परन्तु इसके इलाज के विषय में हमें कभी —

ख्याल ही नहीं आया!

चिंता ही नहीं!

आवश्यकता ही नहीं प्रतीत हुई!

उद्यम तो क्या करना था!

गुरबाणी तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों में, इस 'मानसिक रोग' का स्पष्ट वर्णन किया हुआ है तथा इसके कारगर आत्मिक 'नुस्खे' बताये गये हैं, परन्तु इनकी ओर हम लापरवाह होकर ध्यान ही नहीं देते।

ऐसे गम्भीर, विनाशकारी मानसिक रोगों के इलाज के लिए, विशेष दामनिक, आत्मिक इलाज ही कारगर हो सकता है, जो गुरबाणी अनुसार केवल —

'ठांढा हरि नाउ'

'खुनक नामु खुदाइआ'

ही है अन्य किसी प्रकार के डाक्टरी इलाज या चतुराईयाँ, थोथे दिमागी ज्ञान तथा कर्म-काण्ड लाभदायक नहीं हो सकते।

इसी कारण गुरबाणी में ऐसे दीर्घ, विनाशकारी **मानसिक रोग के इलाज के लिए** निम्नांकित आत्मिक नुस्खे बताये गये हैं —

संसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना ।। (पृ. 687)

अनिक उपावी रोगु न जाइ ॥
रोगु मिटै हरि अवखधु लाइ ॥ (पृ. 288)

नाम अवखधु जिह रिदै हितावै ॥
ताहि रोगु सुपनै नही आवै ॥ (पृ. 259)

सरब रोग का अउखदु नामु ॥
कलिआण रूप मंगल गुण गाम ॥ (पृ. 274)

हरि हरि नामु दीओ दारू ॥
तिनि सगला रोगु बिदारू ॥ (पृ. 622)

अउखधु हरि का नामु हैजितु रोगु न विआपै ॥ (पृ. 814)

हरि हरि अउखधु जो जनु खाइ ॥
ता का रोगु सगल मिटि जाइ ॥ (पृ. 893)

कलि ताती ठांढा हरि नाउ ॥
सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ ॥ (पृ. 288)

मेरे मन नामु नित नित लेह ॥
जलत नाही अगनि सागर सूखु मनि तनि देह ॥ (पृ. 1006)

मन मेरे गहु हरि नाम का ओला ॥
तुझै न लागै ताता झोला ॥ (पृ. 179)

तपत कड़ाहा बुझि गइआ गुरि सीतल नामु दीओ ॥ (पृ. 1002)

अम्रित नामु पीवहु मेरे भाई ॥
सिमरि सिमरि सभ तपति बुझाई ॥ (पृ. 191)

चंदन चंदु न सरद रुति मूलि न मिटई घांम ॥
सीतलु थीवै नानका जंपदड़ो हरि नामु ॥ (पृ. 709)

आश्चर्य की बात यह है कि यद्यपि गुरबाणी के उपरोक्त दर्शाये हुए कारगर नुस्खों को हम बेंअत समय से —

पढ़ते
सुनते
गाते
विचार करते
खोजते
ज्ञान घोटते

आये हैं, परन्तु आज तक इन आत्मिक नुस्खों पर हमें —

निश्चय ही नहीं आया
श्रद्धा ही नहीं उत्पन्न हुई
विचार करने का यत्न ही नहीं किया
अनुभव करने का उद्यम ही नहीं किया
इलाज करने का प्रयत्न तो क्या करना था ?

याद रखने वाली बात यह है कि शारीरिक रोगों का मूल कारण (root cause) **हमारे मानसिक रोग ही हैं**, परन्तु इस जरूरी नुक्ते से हम अनजान हैं तथा लापरवाही कर रहे हैं।

तभी हम शारीरिक रोगों के इलाज पर सारी शक्ति लगा रहे हैं तथा मानसिक रोगों की ओर ध्यान ही नहीं देते।

इसी कारण गुरबाणी में दर्शाये हुए नुक्तों —

'कलि ताती'
'आतस दुनिया'
'संसार रोगी'
'अगन सोक-सागर '

'तपत कड़ाहा'

तथा

'नाम सिमरन'

'नाम दारू'

'नाम अउखध'

'सीतल नाम'

के तत्-विचार की सूझ-बूझ नहीं होती, यद्यपि इन के विषय में थोथा दिमागी ज्ञान तो बहुत घोटते हैं!

इन जरूरी नुक्तों के विषय में, इस लेख के पिछले भागों में दीर्घ विचार की जा चुकी है। फिर भी गुरबाणी की निम्नलिखित पंक्तियाँ इस विषय को और स्पष्ट करती हैं—

माइआ अगनि जलै संसारे ।।
गुरमुखि निवारै सबदि वीचारे ।। (पृ. 1049)

त्रिसना अगनि जलै संसारा ।।
जलि जलि खपै बहुतु विकारा ।। (पृ. 1044)

बिनु नावै सूका संसारु ।।
अगनि त्रिसना जलै वारो वार ।। (पृ. 1173)

गूझी भाहि जलै संसारा भगत न बिआपै माइआ ।। (पृ. 673)

प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ।।
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ।। (पृ. 263)

गुर कै सबदि विचहु मैलु गवाइ ।।
निरमलु नामु वसै मनि आइ ।। (पृ. 560)

सबदु बुझै सो मैलु चुकाए ।।
निरमल नामु वसै मनि आए ।। (पृ. 1044)

इसी कारण गुरबाणी में **'साध संगति'** तथा **'सिमरन'** के विषय में ताकीदी हुकुम अंकित हैं—

मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ।। (पृ. 378)

करि साधसंगति सिमरु माधो होहि पतित पुनीत ।। (पृ. 631)

एकु धिआईऐ साध कै संगि ।।
पाप बिनासे नाम कै रंगि ।। (पृ. 900)

तरिओ सागरु पावक को जउ संत भेटे वडभागि ।।
जन नानक सरब सुख पाए मोरो हरि चरनी चितु लागि ।
(पृ. 701)

आतस दुनीआ खुनक नामु खुदाइआ ।। (पृ. 1291)

(समाप्त)